साक्षात्कार

डॉ. सूर्यबाला के साथ वार्तालाप

डॉ. शोभना.एस

डॉ. शोभना.एस,डॉ. सूर्यबाला के साथ वार्तालाप , आखर हिंदी पत्रिका,खंड 1/अंक 1/सितंबर 2021,(81-98)

सबसे पहले मैं इस साक्षात्कार के लिए और मेरा निमंत्रण स्वीकार करने के लिए धन्यवाद देना चाहूँगी। आप हाल ही में "भारत भारती" पुरस्कार से सम्मानित हुए उसके लिए बधाई देना चाहती हूँ।

प्रश्न - परंपरागत रूप से हमारा समाज को पुरूष-प्रधान समाज माना जाता है। साहित्य का क्षेत्र किसी अन्य क्षेत्र से अलग नहीं है। एक महिला को इस क्षेत्र में प्रवेश करके आगे बढ़ने के लिए बहुत सारी चुनौतियाँ को सामना करना होता है। तो आपने ऐसे किन चुनौतियों का सामना किया है?

उत्तर - सिर्फ भारतीय समाज नहीं बल्कि विश्व समाज पुरुष प्रधान है। स्त्री को थोड़ी ज्यादा कठिनाइयां, समस्याएं आती है। यद्यपि अब समय बदल चुका है, फिर भी बहुत से दौड़ को स्त्री पार करती हुई आई है। आपकी इस प्रश्न में एक बड़ा ही सुंदर वचन यह है, कि साहित्य के क्षेत्र में पैर रखनेवाली स्त्री को और ज्यादा समस्याओं को सामना करना पड़ता है। इसीलिए नहीं कि समाज पुरुष सत्तात्मक है बल्कि हम परंपरा से वैसे चलते आ रहे हैं। मानते हैं पुरुष शौषक है और नहीं भी है तो भी साहित्य को समझने वाले बहुत थोड़े ही लोग हैं। मैं एक छोटा-सा उदाहरण आपको दूँ- जैसे तो कोई मेहमान हमारे घर आए हैं तो मैं कोई सीरियल देखती हूं वह तो किसी को नहीं खटकेगा। लेकिन मैं यदि स्टडी में जाकर कुछ लिख रही हूं वह तो जरूर खटकेगा। लेखन एक ऐसी चीज है जितनी बेचैनियां,तकलीफों से गुजरकर, हर तकलीफ को अंदर महसूस कर के लिखते हैं वह किसी को बताया, समझाया नहीं जा सकता। पहली बात

तो यह है जानबूझकर लेखिका बनने के लिए या यश प्रशस्ति पाने के लिए मैंने लिखना शुरू नहीं किया। लिखना तो बचपन से एक स्वभाव की तरह, एक आदत की तरह में लिखने लगी।

जब लिखने लगी, तो लिखना अच्छा लग रहा था, एक आनंद देता था। तो आगे चलकर मैं जब साहित्य की बड़ी मंच पर आयी, उस समय लोगों की अपेक्षाएं और काम इतना ज्यादा बढ़ गया। उस समय में एक चौके की मोरचा लड़ रही थी और वह भी किसी को दिखाई नहीं पड़ रहा था। ऊपर-ऊपर में सबको एक प्रसन्न चित्त दिखाई पड़ती थी। एक आदर्श बहू, एक आदर्श पत्नी, एक आदर्श माँ। सब की भूमिकाएं निभाते-निभाते मैं जिस तरह अपनी लेखिका के लिए समय निकाल पाती थी एक अलग कहानी है। लेकिन उसके बावजूद मैंने यह देखा जब स्त्री लगातार सबका ध्यान रखते हुए, और सबको सब का प्राप्य देते हुए,अपना काम करती रही तो कहीं न कहीं उसका मूल्यांकन होता है। इतना हृदयहीन समाज नहीं है हमारा। अपवाद जरूर है, लेकिन मेरा यह मानना है कि स्त्री हो या पुरुष पहले देना सीखें। धीरे-धीरे लोगों ने ये देखा हमारा सब कुछ जो हमें चाहिए यह प्रदान कर रही हैं। तो इसको जो इच्छा इसको करने दो। तो उस किस्म मेरा नहीं था परिवार जैसे जबरदस्ती बाधा पहुंचाये। साहित्य को लेकर लेखन का काम जो है वह और भी ज्यादा कठिन होता है। क्योंकि गंभीर, रचनात्मक लेखन को समझने वाले बहुत कम होते हैं और आप उन्हें दोष भी नहीं दे सकते हैं । और दूसरी समस्या यह है कि लेखन का काम जो है यह आपको पैसा नहीं देने वाला है। इसीलिए कठिनाइयां तो बहुत ज्यादा आती है इसलिए आप देखें समाज में चारों तरफ की बड़े-बड़े स्त्रियां डॉक्टर इंजीनियर तो बन जाती हैं लेकिन लेखिकाएँ बनना कठिन है।

प्रश्न - एक लेखिका के रूप में आपके कैरियर के आरंभ काल में आपके परिवार वाले कहां तक सहायक थे? आपकी सफलता में आपके जीवनसाथी की भूमिका को बताइए?

उत्तर - जहां तक मेरी बात है मेरे बचपन में ही पिता नहीं थे। मेरे घर में सबको अच्छा भी लगता था, रुचियां भी सबको ता कला, साहित्य, लेखन वगैरह में। मेरे बचपन के लेखन सब को अच्छा लगता था।

लेकिन बचपन का लेखन अलग तरह होता है, सारे काम के बाद बचे हुए समय पर कभी ऐसा छुप करके लिखते थे। बचपन से ही मेरी परिवार ने बराबर जो साहस दिया।

सबसे बड़ी बात है, महत्वपूर्ण बात है, मेरा विवाह हुआ और वह पूरा गाँव का पारंपरिक भारतीय परिवार का। लेकिन वहां भी लोगों ने मुझे पी.एच. डी करने के लिए पूरी अनुमति दी। साथ-साथ उन्होंने मेरे लिखने को लेकर बड़ा गर्व करते थे। मेरे घर की बेटे का विवाह ऐसे लड़की से हुआ की और लड़कियों खाली पढ़ती हैं बल्कि इसका चित्र भी अखबार में छपता है। जो रिश्तेदार-नातेदार जो पहले ही उत्सुकता थी कि इस घर को पढ़ी-लिखी बहू आए, तो परिवार को बिगाड़ देगी तो बहुत गलत काम कर रहे हैं, तो परिवार को इतनी पढ़ी-लिखी लड़की ला रहे हैं। पढ़ी-लिखी लड़कियाँ घरेलू नहीं होती, पढ़ी-लिखी लड़कियाँ घर की नहीं होती। लेकिन मैंने उन्हें घुल- मिलाकर अपनाया बहुत जल्दी उस परिवार से जुड़े जितने नातेदार थे। उन सब ने सोचा कि हम भी अपने घर में पढ़ी-लिखी लड़की लाये। इसे मैं अपनी लेखन की उपलब्धि से ज्यादा बड़ी उपलब्धि मानती हूं। मैंने जो उपलब्धि ली उसको मैं कभी उपलब्धि की दृष्टि से देखती नहीं हूँ। लेखन को कभी कैरियर की तरह या महत्वाकांक्षा की तरह कभी भी नहीं लिया। और आपको बता देती हूँ कि आपने मेरे ऊपर पी.एच.डी कार्य कर रहे हैं, मैंने आज तक कभी कोई किसी भी पुस्तक कोई सम्मान के लिए नहीं लिखा। मैंने हठ कर लिया था, प्रण कर लिया था, मैं अपनी पुस्तक पुरस्कार के लिए नहीं भेजूँगी। मैं काफी दिनों तक एक तरह बेनाम भी रहीं।तो उस दृष्टि से सफल भी नहीं रहीं। मेरी समकालीन लेखिकाओं की पुरस्कार ज्यादा था। हर महीने एक पुरस्कार लिए। लेकिन मैं उनमें नहीं हूँ। साहित्य की दुनिया में बहुत प्रलोभन हैं। मैं उनसे बहुत बचके अपने परिवार में थी, जितना होता था वही करती रही। इस दृष्टि से क्या सफलता मुझे मिली या मैं कहां पहुंची यह मैंने कभी सोचने की जरूरत नहीं समझी। कुछ लोग यह भी पूछते हैं कि,-"आप अपने आप को कहां पाते हैं?" आज के लेखन में या स्त्री लेखन में या कथा लेखन में? तो मैं कहती हूँ कि मैं यह सब कभी सोचती नहीं हूँ। मैं लिख रही

हूँ, सबके साथ-साथ लोग पढ़ रहे हैं, मेरे पाठक पढ़ रहे हैं **that itself is great**। वो मेरी सबसे बड़ी खुशी और आनंद है बस। जीवनसाथी को मैं बहुत ज्यादा महत्व देती हूँ। क्योंकि उन्होंने कभी भी अपने तरफ से कभी कोई आपत्ति उठाई नहीं है। यह बात अवश्य है कि मैंने उन्हें आपत्ति उठाने का अवसर नहीं दिया कभी भी नहीं दिया। लेकिन वह चाहते तो प्रकृति होने के नाते, पति होने के नाते, बहुत सारी आपत्तियां उठा सकते थे। और तो और पत्नी की इतनी बढ़ती प्रशस्ति, यश से सबसे प्रकार की पति प्रायः वो लेखक हो या लेखक न हो बहुत ईर्ष्या करते हैं। पति बहुत सी संपत्ति पूरे विश्व में प्रशस्ति पाए होंगे, जो पत्नी की छोटी सी प्रशस्ति देकर खुश नहीं होते। तो मेरे पति ऐसे नहीं थे जो उनको मेरा लिखना अच्छा लगता था। तो मैं जो कुछ लिखती हूँ उसके पहले श्रोता भी मेरे पति ही होता है।

प्रश्न - वर्तमान पीढ़ी की उन महिलाओं को आप क्या सलाह देना चाहती हैं, जो एक लेखिका बनना चाहते है?

उत्तर - देखिए पहली बात तो यह है लेखिका बनना चाहने पर आप लेखिका नहीं बन सकती है। डॉक्टर बनना चाहने से खूब मेहनत करने से डॉक्टर बन जाती है। लेखन जो है इसका संबंध सीधे-सीधे प्रेरणा से होता है। जो बहुत ही संवेदनशील होते हैं, भावुक लोग होते हैं, वो न चाहते हुए भी लेखक होते चले जाते हैं। रचनाकार होते चले जाते हैं। पुरुष हो या स्त्री मैं यह कहूंगी कि पहले आप जांच कीजिए कि आप बिल्कुल बहुत बेचैन हो रहे हैं। बिना लिखे रहा नहीं जाए तब ऐसी स्थिति आ जाएं तो आप जो सूझ रहा है, उसे लिखिए तब लेखक बनिए। तो लेखिका बनना कोई चाहता नहीं। लेखिका बस हो जाती है। तो मैं यही कहूंगी कि जांच कीजिए अगर आप में प्रतिभा है, आपने संवेदना है इस तरह के गुण हैं तो यह समझ लीजिए कि आज बहुत ही प्रतिस्पर्धा का माहौल है। तो यह लेखन परिश्रम माँगता है। तो कहते हैं कि आपका दरिया है तो अचीज है। हाँ, चालू लेखन, सामान्य लेखन टाइम-पास लेखन करने के लिए कोई भी कर सकता है।

प्रश्न - किसी पुस्तक को वास्तव में अपना पूर्ण आकार लेने में कितना समय लगता है। उस समय से जब आपके मन में विचार पनपते हैं, उन विचारों को कलमबद्ध करने में और हम जैसे पाठकों तक पहुँचने में कितना समय लगता है?

उत्तर - एक तो कहानियाँ लिखते है या तो रचना या कृति इस उपन्यास। अगर कहानी है तो कहानी छोटी रचना होती हैं। कहानी कभी-कभी एक सीटिंग में लिख देते हैं। क्योंकि बड़ी तकलीफ देय बिंदु, कोई बड़ा ही संवेदनशील ऐसी घटना, व्यक्ति या चरित्र हमें अंदर बहुत डिस्टर्ब करता है और हम बहुत बेचैन होते हैं। और मुक्ति के लिए सिवाय लिखने के हमारे पास कोई उपाय नहीं रहता। और समय भी नहीं रहती है गृहणी के पास। तो हम जैसा महसूस किया, फिर हम उसे बिल्कुल बंद करके रख देते हैं, देखते भी नहीं जहां तक लिख पाते हैं, लिखते हैं उसके बाद बनाने की कोशिश नहीं करते हैं, रख देते हैं। आठ-नौ दिन बाद जब हम मन से बिल्कुल, वैसा मन होने पर, मूड होने पर उठाकर देखते हैं। उसमें बहुत सी चीजें, भावावेश में पहला लेखन होता है, बाद में बहुत सी चीजें तराश भी देते है, संशोधित करते हैं। कभी-कभी जैसा का वैसा ही बहुत अच्छा होता है। लेकिन ज्यादातर कभी कोई कहानी महीनों नहीं बल्कि वर्षों हमारे अंदर रहती हैं। कभी कोई कहानी जल्दी ही कुछ दिनों में ही लिखी जाती है। इसके लिए कोई सिद्धांत नहीं है, न ही कोई अंतिम सत्य है। हाँ, चूँकि हम एक प्रतिष्ठित हो गए, स्थापित हो गए तो पत्रिकाएं माँगती रहती हैं, देते हैं। पत्रिकाओं में आ गई रचना तुरंत पाठकों तक गई उन्होंने पढ़ा और जब नौ-दस कहानीयाँ तैयार हो गई तो हम उन्हें पुस्तक का आकार प्रदान करते हैं।

प्रश्न -जब भी कोई आपके कहानी या उपन्यास को पढ़ते हैं तो यह बहुत स्पष्ट लगता है कि आपकी कहानियाँ और चरित्र वास्तविक है। ऐसा लगता है कि जैसे वे हमारे अगल-बगल में रह रहे हैं। क्या आपने कभी महसूस किया है कि हमारे संवेदनशील समाज में आपके काम में इतना यथार्थ को चित्रित करना थोड़ा चुनौतीपूर्ण है?

उत्तर - चुनौतीपूर्ण तो है लेकिन एक बात आपको बताऊँ- चुनौतीपूर्ण है, इसीलिए कि आप क्या लिखना चाहती है। जैसे मैंने शिवा का चरित्र लिखा जैसे आप बता रही हैं वैसे बहुतों ने मुझ से कहा और आपको पता है कि शिवा पैंतालीस साल पहले और सबसे बड़ी बात है कि आज की पीढ़ी को भी शिवा अच्छी लगती हैं। यह मेरा पहला उपन्यास था बहुत जल्दी-जल्दी लिखा था, लिखती चली गई, लिखती चली गई नई लेखिका थी न। सिर्फ दो ढाई साल हुए लिखना शुरू करके। और लोग आश्चर्य में पड़ गए कि "धर्मयुग" में धारावाहिक आया था, ये उपन्यास।

चुनौतियां भी कई तरह की होती हैं एक जो बहुत ही चरित्र के गहरे में लेखक को उतारना होता है। फिर उस चरित्र को महसूस करता हैं, उसे वैसा ही उतार देता हैं। यह तो रचनात्मक चुनौती हुई। और लेकर की अंदर की चुनौती होती हैं। लेकिन जो सामाजिक यथार्थ की बात आप कह रहे हैं, कि शायद आपके मन में यह है कि किसी चरित्र को हम वैसे के वैसे लिखते हैं। मेरा हमेशा यह मानना है कि आपत्तियाँ तभी उठती है, जब आप किसी चरित्र को बहुत खोलकर रख देते हैं। बहुत खुला रखते हैं तब आपत्ति होती हैं या आपत्ति तब उठती हैं जब किसी को लगे कि आप सच का सच किसी चरित्र को लिख दिया है। वो चरित्र पर कोई आपत्ति कर सकता है। तो इन चीजों को ज्यादा महत्व नहीं देती हूँ। जो गंभीर लेखन, परिपक्व लेखन, बहुत ही ज्यादा यथार्थ से हमारे को क्या मिल रहा है ये बात है।

तो आप पाठक को ध्यान में रखकर लिखती हैं?

नहीं हम पाठक को सोचकर नहीं लिखते हैं। अपने आप अंदर में एक विवेक होता है कि कुछ तो उसमें हो जैसे वैचारिकता है, हमारी भावना है। तो वही कलम उतरती हैं। कुछ लोगों को लगे कि इन्होंने हमारे बारे में ऐसा लिख दिया। इस तरह के प्रश्न उठना स्वाभाविक है। मेरी एक कहानी है "संताप" उसमें एक विकलांग बच्चे और पति-पत्नी के बारे में लिखा था। किसी को लगा ये तो ऐसा नहीं है उनको ऐसा देखा दिखा दिया। लेकिन उसमें थोड़ी बहुत गलतफहमियां हुई। ऐसे मेरे व्यंग्य,कहानियां और उपन्यासों को लेकर भी हुआ है।

प्रश्न -अब मेरी रुचि या मेरे शोध विषय जो "सूर्यबाला के कथा साहित्य में बदलते पारिवारिक संदर्भ" क्या आपने कभी महसूस किया है कि आपके काम में परिवार के बदलते मूल्यों में नारी को केंद्रित करके या नारी को केंद्र में रखकर अधिक जोर दिया गया है? परिवार में नारी की भूमिका पर। हालांकि आपने अन्य विषय पर भी फोकस किया है।

उत्तर - मैं तो मानती हूँ स्त्री विमर्श में स्त्री लेखन को बहुत अधिक सीमित किया है। क्योंकि सब लोग एक ही तरह के कहानियाँ लिख रहे हैं। क्योंकि पत्रिकाएँ वही कहानियाँ मांगने लगे, संपादक वही कहानियाँ छापने लगे, समीक्षक उन्हीं कहानी पर समीक्षा करने लगे। जिसको देखो वो स्त्री विमर्श पर ही लिख रहा है। एक ही तरह की कहानी आने लगी। तो मैं हमेशा इसके विरूद्ध रही, और कई जगह मैंने कहा है स्त्री विमर्श में स्त्री लेखन की संभावनाओं को सीमित किया है। उसकी चारों तरफ़ यह और गहरा और विस्तृत हो सकता था। जैसे मेरी शिवा तो स्त्री विमर्श से बिल्कुल विमुक्त है, आलोचकों को यह लगता है कि शिवा प्रतिरोध नहीं करती लड़ती नहीं। उन लोगों को समझ में नहीं है कि शिवा प्रतिरोध किससे करें? उसका पति भी उसको बहुत प्यार कर रहा है, बहुत ही सीधा-साधा है। जबकि वह सामान्य घर की लड़की रहती है, उसे बहुत अमीर रायजादा परिवार, शहर के प्रतिष्ठित परिवार, उसको बहु के रूप में लाते है। उसकी सौतेली बेटियां उसको मानते हैं। आप देखिए कि पढ़े-लिखे समीक्षकों की समझ कितनी सीमित होती है। हर जगह स्त्री विमर्श ढूंढने लगे। तो मुझसे लोग कहने लगे कि आपने स्त्री विमर्श स्त्री या मुक्ति पर कुछ नहीं लिखा? तो मैं उनसे कहती कि नहीं अभी मैं पुरुष-मुक्ति पर लिखनेवाली हूँ।

हाँ परिवार में स्त्री की बदलती भूमिका को लेकर मैंने लिखा है। मेरी एक कहानी है,-"होगी जय,होगी जय...हे पुरुषोत्तम नवीन" उसमें स्त्री की भूमिका बहुत बदली है। वो पुरुष-प्रधान कहानी है। लेकिन उसमें अरुण वर्मा की पत्नी उसे प्रेरित करती हैं, प्रोत्साहित करती हैं कि तुम अपनी ईमानदारी की रास्ते से हटना मत। तुम सस्पेंड भी हो जाओ, फिक्र मत करना, **I am there to look after the house**। वो कहती है, और अरुण वर्मा कहता है,- हां नयी मुक्त स्त्री की सार्थकता ही क्या है, स्त्री की

सशक्त और सामर्थ्य की सबसे बड़े सार्थकता ये है कि वो अपने लिए भी करें और साथ ही साथ परिवार और समाज के लिए भी करें।

प्रश्न - आपने बहुत सारे लेखकों के कृति पड़े होंगे उनमें से आपकी पसंदीदा लेखक या लेखिका कौन है? और आपकी पसंदीदा कृति कौन सी है?

उत्तर - "रामचरितमानस"- की तरह दूसरी पुस्तक विश्व में नहीं है। उसमें जीवन की हर पक्षों का इतना मार्मिक और इतना आदर्श वर्णन किया गया है। मुझे लगता है कि इसके बहुत अच्छे अनुवाद पूरी मार्मिकता के साथ बनाकर पाठक में रखा जाए तो बच्चों का चरित्र, बच्चों की मानसिकता, बच्चों की समझ बहुत-बहुत विकसित हो सकती है। अगर व्यक्ति की समझ विकसित होती तो समाज में समझदार व्यक्ति वाला समाज विकसित और स्वस्थ सोच वाला समाज विकसित हो सकता है। इसीलिए मैं रामचरितमानस को बिल्कुल धार्मिक दृष्टि से नहीं कहती हूँ। रामचरितमानस के राम के मनुष्यत्व के सामने उनका दैवत्व कुछ नहीं है। रामचरितमानस में राम की मनुष्यत्व को दैवत्व से भी ऊंची जगह देती हूँ। अन्य रामायण से गोस्वामी तुलसीदास की रामचरितमानस में, सबसे महत्वपूर्ण बात लगी है तो यह है कि उसमें समाज की व्यवस्था कैसे हैं, परिवार कैसा है, सास-बहू के संबंध कितने मधुर, कितने अच्छे हैं भाई-भाई के संबंध, राम, भरत लक्ष्मण,शत्रुघ्न चारों भाइयों में इतना प्रेम था, इतना स्नेह था, कि राम खेल में भी अपने भाइयों को हारने नहीं देते। तो बचपन में सुनी वो बातें मेरे अंदर तैरने लगी। राम अपना अधिकार भरत को दे रहा है, और भरत ले नहीं रहा है, रो रहा है गिड़गिड़ा रहा है। लेकिन आज के समाज में क्या देख रहे हैं ज्यादा स्वार्थ, अधिकार छीनकर लेना। तो राज धर्म क्या है, राजा का धर्म क्या है, स्त्री का धर्म क्या है, ठीक है ये मैं मानती हूँ। आपसे बताऊं गोस्वामी तुलसीदास मनुष्य ही थे। अपने समय की परंपराओं से वो भी कहीं न कहीं ठोकर खा रहे होते। लोग बहुत कोट करते हैं, कि गोस्वामी तुलसीदास ने बिना समझे-बुझे कहा कि,-

"स्त्री, शुद्र,पशुधारी" तो यह नहीं देखते हैं कि इस चौपाई को किस संदर्भ में कहा गया है। वहां वह तुलसीदास नहीं बोल रहे हैं कलनायक रावण बोल रहा है। रावण बोल रहा है, रावण वही बोलेगा जो उसको बोलना है। इसीलिए किसी भी पुस्तक को बहुत गहराई और बहुत व्यापकता में जाकर देखना

चाहिए। राजनीति कैसी होनी चाहिए, समाज नीति कैसी होनी चाहिए, रिश्ते-संबंध कैसी होनी चाहिए यह सब रामचरितमानस में बताया गया है। उसमें एक चौपाई मेरे मन को बहुत छूती है, जब सीता वन जाने के लिए कहती हैं,- मैं भी राम के साथ वन जाऊंगी। तो कौशल्या बड़े प्यार से कहती हैं कि सीता यह मेरी अपनी बहू सीता को मैंने सिर्फ पलंग पर बिठाया है, जूली पर बिठाया है। इसने कभी धरती पर पैर रखा ही नहीं। इसको मैं अपने जीवन की संगेदिनी की तरह संभालकर मैंने अपने मन और घर में रखा है। वो मेरी बहू इतने कठोर वन में जाना चाहती हैं। मैं कैसे उसको जाने दूं। यह तो हुई सास-बहू की और अब देखिए- जब राम बन जाना चाहता हैं। जब कौशल्या को पता चलता है, तो एक चौपाई में कहती हैं,- यदि पिता ने तुम्हें आज्ञा दी हैं तो मैं बड़ी माँ होने के नाते तुम्हें रोक सकती हूँ। लेकिन अगर माता और पिता दोनों ने तुम्हें आज्ञा दिए हैं। मतलब कैकेयी और दशरथ दोनों ने, तो मैं तुम्हें रोक नहीं सकती। ऐसे कहकर अपनी स-पत्नी को इतना मानती हैं। ऐसा समझ, ऐसा विवेक होगी तभी तो राम-राज्य है।

ऐसे तो बहुत से नए पुस्तक है। प्रेमचंद जी का "गोदान", बहुत सी कहानियां है। तो मैं पुस्तक पर जाती हूँ। किसी एक रचनाकार पसंद है या नहीं पसंद है। किसी रचनाकार का कोई एक पुस्तक, किसी रचनाकार का कोई और पुस्तक पसंद है।

प्रश्न -आप की कुछ कहानियां जैसे:- "सिर्फ मैं, इसके सिवा, दूज का टीका, मय नेम इश ताता" में आपने नौकरी पेशा महिलाओं को इतने सकारात्मक रूप में नहीं दिखाया या अंग्रेजी में कहें तो ग्रे शेड में दिखाया है। क्या आपको वास्तव में लगता है कि वर्तमान महिला जो कैरियर के प्रति जागरूक, महत्वकांक्षी और रवैये से प्रेरित है, वह वास्तव में खुद को उम्र पुराने रिवाज और आदर्श पारिवारिक मूल्यों की परंपराओं से

अलग कर रहे हैं या सिर्फ एक विकसित चरण है जहां वह अपनी जगह पाने की कोशिश कर रही है परिवार और समाज दोनों में।

उत्तर - मैंने यह कहानियां जिन दशकों में लिखी, मैंने कहीं ऐसा देखा होगा। हम जैसे देखते, जो महसूस करते है, वही लिखते हैं। तो किसी एक पक्ष पर ही, कहानी में सब कुछ लिखने की गुंजाइश नहीं रहती। तो ये बेसिकली जो मैंने लिखा है यह नौकरी पेशा के विरुद्ध नहीं है। बल्कि जॉब होने की वजह से जहां स्त्री ज्यादा महत्वकांक्षी हो जाती हैं-इसके विरुद्ध है। "मय नेम इश ताता" में मैंने दिखाने की कोशिश की, कि आज का समय खलनायक है। मेरी कहानियों और उपन्यासों में ज्यादातर की चरित्र या पात्र खलनायक नहीं है, बल्कि स्थितियां, जो कलनायक होता है। परिस्थितियों की वजह से उनको ऐसा करना पड़ता है। ऐसा नहीं कि माता-पिता बच्चों से प्यार नहीं करते यदि बच्चों से प्यार करेंगे तो ऑफिस में काम नहीं होता है। ऐसे में उनको बच्चा और उस्का प्यार दोनों चाहिए। उसमें उनको संतोष करना पड़ता है। तब दोनों में से एक को जॉब करना ही पड़ेगा। मेरा ये मानना है कि आप अपनी महत्वाकांक्षा को फेस करना पड़ेगा- यह बड़ा बुरा लगता है। आप सोचे कि बहुत प्रतिभा है तो यहां पर जाना चाहते हूँ। तो फिर हमारी कल वाली बात आती है। तब आप विवाह मत करिए, विवाह करिए तो बच्चे ना करिए। आप अपने करियर को लेकर साथ रहीए। दूज का टीका में भी मैं मानती हूँ कि **Don't think I am justifying all my stories** ऐसी बात नहीं है। मुझे भी थोड़ी पुरानी कहानी लगती है। क्यों लगती है उसमें जो दे हैं वह तार्किक है । इनको रक्षाबंधन, भाई दूज, कोसला मान गई। मैं ऐसा नहीं मानती, मैं ऐसा मानती हूं कि हमारे जितने भी पर्व, उत्सव है ये हमारी रिश्तों को और मजबूत करने के लिए ही मनाया जाता है। तो अगर मैं ऐसा न दिखाती तो समाधान और संतुलन कैसे स्थापित होगा।

प्रश्न - आपकी कहानियों की एक और गंभीर मुद्दा है, हमारे समाज की बारहमासी समस्या-वृद्धावस्था की सुरक्षा। आपकी कहानियों में से एक अच्छी संख्या में आपने बच्चों के माता-पिता की देखभाल नहीं करने और बुजुर्गों के प्रति समग्र उदासीन रवैए को दर्शाया है। इन बहुत व्यावहारिक मुद्दे जो हमारे समाज को

नुकसान पहुंचा रहा है, हमारे पारिवारिक व्यवस्था को बिगाड़ रहा है, उसे सुलझाने के लिए क्या आपके पास कोई हल या सलाह है?

उत्तर - जो रचनाकार होता है, हम समस्याओं को सामने रख देते हैं। और समस्याओं के समाधान की ओर बस हल्का सा संकेत करते हैं। जैसे कि स्त्री पक्ष, नौकरी पेशा, बच्चों की देखभाल आदि। उसका हल्का सा संकेत किया कि कहीं ना कहीं संतुलन स्थापित हो जाए। इसी तरह से जो वृद्धों की समस्या है, जो मूल रूप में क्या है हम बता रहे हैं कि युवा- दंपति के मन में पछतावा, संवेदना जागृत करने की कोशिश करते हैं। रचनाकार या लेखक पाठकों के मन में मनुष्यता, मानवियता की भावना पैदा करने की कोशिश करता है। जो की हम वृद्धों की भावना के बारे में लिखेंगे तो उन्हें समझ में आएगा वही समाधान है। समाधान पाठकों को खुद ढूंढना है। आगर हम समाधान व्यक्त करेंगे तो पुराने जमाने की कहानी हो जाएगी। तो वह एक फार्मूलाबद कहानी हो जाएगी। हम स्थितियां दिखाते है, दुख दिखाते है, जीवन में संतुलन और समरसता दिखाने का संकेत करते हैं। और मनुष्य को और ज्यादा संवेदनशील बनाते हैं, तो मनुष्य समाधान स्वयं ढूंढते हैं।

प्रश्न -एक और प्रवृत्ति जो हमें आपके काम में देखने को मिलती हैं जैसे:- चोर दरवाजे, उत्तरार्द्ध, सुनो समित, सुनो सुलभ, कहो ना, झील, संताप आदि कहानियों में की आधुनिक युवा दंपति परफॉर्म करने की महत्वकांक्षा और पीयर प्रेशर के कारण अक्सर ऐसा लगता है कि वे परिवार के वास्तविक मूल्यों को खुद ही को देते हैं। जैसे:- एक साथ खाना, बच्चों के साथ खेलना, एक दूसरे के साथ समय बिताना और एक दूसरे के लिए उपलब्ध होना। आपको क्या लगता है कि आधुनिक पीढ़ी कहां जा रही हैं। क्या यह वास्तविक परिवारिक जीवन की कीमत पर बहुत अधिक महत्वकांक्षा है या सामान्य मूल्यों का ह्रास है?

उत्तर - मुझे यही लगता है कि हालांकि उनको दोष नहीं दिया सकता। समय ऐसा आ गया कि एक व्यक्ति कमाने से नहीं चलने वाला है। दोनों को कमाना हैं, ये चीज है कि रास्ता निकालना उनका काम है। धीरे-धीरे ऐसे कई माताएं हैं जिन्होंने अपना बहुत अच्छा कैरियर छोड़ा अपने बच्चों के लिए। बीच में ऐसा

नई शिक्षा का प्रचार हुआ, कामकाजी महिला ज्यादा होने पर भी बाकी सब चीजों के साथ-साथ आने के साथ-साथ उसकी महत्वाकांक्षा ठीक है। जो कहते हैं न एक ट्रेंड चल रहा है। मैंने कहा न अगर परिवार हैं तो परिवार के लिए धातक बने रहना। फिर हमें जो जुड़ाव और जो रिश्तो की बहुत सुख, बहुत बहुमूल्य खुशियां को देते हैं। साथ बैठकर खाना अपने आप में एक सेलिब्रेशन होता है। पुराने जमाने में कहते थे कि तुम थोड़ा इंतजार कर लो, हम एक दूसरे का रास्ता देखते थे, क्यों, हमें बहुत खुशी मिलती थी। एक साथ बैठकर खाने में कितनी अच्छी बातें हो रही थी। जोक्स कर रहे थे, चिढ़ा रहे थे, एक अजीब खुशी मिलती थी। अब सब अपने-अपने मोबाइल लेकर बैठे हैं, तो सबसे बड़ी नुकसान हो रहा है। वह मनुष्यता का हो रहा है हां हमारे संबंध की प्रवाह का हो रहा है। इस वजह से हमारे जीवन का बहुत बहुमूल्य सुख खुशी हमसे छुट्टी जा रहे हैं।

प्रश्न -"मेरे संधि पत्र" की 'शिवा', "सुबह के इंतजार तक" की 'मानू' और 'काकी', "दीक्षांत" की 'कुंती' और "विद्या भूषण शर्मा सर" इन सभी पात्रों में आप ने निस्वार्थ और त्याग की प्रतिमा को दर्शाया हैं। क्या आपको लगता है कि ऐसा आदर्शवाद आज की हमारे समाज और इसके बदलते मूल्यों के लिए प्रासंगिक है?

उत्तर - इसका सीधा जवाब है-हां हो सकता है कि संभव न हो। इतना ज्यादा त्याग, आदर्श- मैं बताऊंगी की यह संभव भी है आज के समय में। पहले तो लगता है कि संभव ना हो। पहले तो लगता है कि संभव न हो। लेकिन हम सोचना नहीं बंद करें। जब हम बहुत अच्छा सोचेंगे तो हम थोड़ा अच्छा जीवन में करेंगे। जब हम सपने देखते बड़े ऊंचे सपने देखते हैं तो थोड़े से जीवन में भी छोटे रूप में ही सही साकार करेंगे। बहुत अच्छे विचार बहुत लोगों से सुनेंगे तो हमारे भी विचार अच्छे होंगे। तो हम ये कोई भी चीज असंभव है संभव नहीं लगती, यह सोच कर हम सपनों को देखना बंद नहीं कर सकते। हम निरंतर मनुष्यता और जीवन और विश्व के बेहतरी का सपना देखते ही रहना है।

दूसरी चीज आपने कहा कि शिवा का मैंने बताया, उसका कारण क्या है- शिवा अंदर से बहुत समर्थ और मजभूत स्त्री है। शिवा को किसी ने फ़ोर्स नहीं किया है। उसको खुद पसंद है, ये सौतेली बेटियाँ इतना प्यार कर रहे हैं। स्वयं देख रही हैं कि इतना समृद्ध परिवार मुझे अपनाया है, बहु बनाया है। अपने मन में उनके प्रति वह हमेशा कृतज्ञ रहती हैं।

"मानू"- उसके लिए चरित्र लिखने के बाद, मैंने बहुत ज्यादा मानू को लेकर ऐसा समाज में संभव नहीं है करके सोचा था। लेकिन मैं आपको एक ऐसा प्रसंग बताती हूँ। उन दिनों में अमेरिका में थी, और इसका दूसरा- तीसरा संस्करण आने वाला था। प्रकाशकों ने मुझसे कहा था कि मैडम तीसरे संस्करण की भूमिका लिख दीजिए। उन दिनों में वहाँ पर रीडर्स डाइजेस्ट(**Readers Digest**) पढ़ रही थीं। उसमें सत्य कथाएं निकलती है। और इतनी मार्मिक सत्य कथा थीं क्योंकि अमेरिका वगैरा पश्चिम में ज्यादातर वही हो गया है न जो आज इंडिया में हो रहा है। वो बहुत पहले अमेरिका में होता है। वहाँ पिता भी ड्रिंक कर रहा है, माँ भी पीती है, दोनों की ईगो क्लेश होता है। उसमें सबसे ज्यादा नुकसान बच्चों का होता है, ऐसे बच्चों को सोशल सर्विस- सामाजिक संस्थाएं सेवक संघ ले जाते हैं, सरकार की तरफ से पाले जाते हैं। उनके लिए होता है कि मां-बाप अयोग्य हैं, ये बच्चे को नहीं पाल सकते। एक कहानी मैं ऐसे पढ़ी थी जिसमें चार-पाँच भाई-बहनों का परिवार है। उनके माता-पिता ऐसे ही विछिन्न हो गए हैं। तलाक करते हैं, ये इसके वो उसके साथ अलग-अलग तो ये बच्चों की कोई देख-रेख नहीं करते। तो ये सबसे बड़ी बहन मुश्किल से चौदह-पंद्रह साल की होगी। तो इतनी कोशिश करती हैं, वह भी इंडिया में नहीं अमेरिका में। इतनी कोशिश करके अपने छोटे भाइयों को कुछ झूठ बोलकर अपने घर में वापस ले आती हैं। खुद उन बच्चों को अपने भाई-बहनों को जो माँ-बाप नहीं कर पाते वह बहन करती हैं। फिर छोटा भाई भी कुछ करने लगता है, उसकी छोटा भी कुछ करने लगता है, वो सब ऐसे करते-करते एक-दूसरे का सपोर्ट करते हैं सहयोग करते हैं। यह बिल्कुल सच्ची कहानी है, ये कहानी मैंने पहले पढ़कर उपन्यास नहीं लिखी। पहले लिख दिया था उपन्यास उसकी कई वर्षों बादअमेरिका में ये कहानी पढ़ी तो मुझे थोड़ी सुकून मिला। मैंने

जो पुस्तक में लिखा है उससे कई ज्यादा बड़ा त्याग सचमुच जीवन की किसी बहन या लड़की ने किया। मुझे कोलंबिया यूनिवर्सिटी के स्टूडेंट्स ने भी यही प्रश्न पूछा कि आप जिस समाज की कल्पना कर रही हैं वह साकार हो सकता है?

तो मैंने उनसे भी यही कहा कि नहीं हो सकता है, इसलिए ये सोचके हम समाज को अच्छा बनाने की कोशिश बंध नहीं करेंगे।

प्रश्न -चूँकि मेरा विषय हैं,- "सूर्यबाला के कथा-साहित्य में बदलते पारिवारिक संदर्भ" तो आप बताइए कि "आदर्श परिवार" कौन सा है या "आदर्श परिवार का स्वरूप कैसे होना चाहिए"?

उत्तर - आदर्श परिवार- मैं इतना कोई बड़ा महान रचनाकार नहीं हूँ, मेरी भी कमियां हो सकती है। पहली बात तो आदर्श परिवार में एक संतुलन हो। मैंने बहुत सी कामकाजी महिलाओं को ऐसा देखा है जिन्होंने अपने बच्चों को बहुत सी क्वालिटी टाइम(**quality time**) दिया है। जिसमें आप बच्चों को क्वालिटी टाइम दे सके। जिस परिवार में दोनों पति-पत्नी में एक सामंजस्य हो, दोनों एक-दूसरे की भावनाओं, इच्छाओं का सम्मान करें। तो आदर्श परिवार में सबसे पहले यह रखती हूँ,- पहले बात पति-पत्नी एक दूसरे का सम्मान करें, कोई किसी पर अधिकार चलाना नहीं चाहिए। उनमें इतना विवेक हो कि वह एक दूसरे के लिए कुछ त्यागने- छोड़ने के लिए तैयार हो। बहुत जगह ऐसा होता कि पति-पत्नी को सपोर्ट करता है। दोनों एक- दूसरे को इतना प्रभावित करते हैं कि वो एक-दूसरे के लिए कुछ कर सकने में खुशी महसूस करते हैं। बच्चों को क्वालिटी टाइम दें। थोड़ा-सा संतोष जहां कि बच्चों के प्रारंभ से महसूस करें। आजकल ये बहुत मुश्किल है, कहना आसान है, करना मुश्किल है। लेकिन यह प्रवृतियां इस तरह बढ़ेगी तो धीरे-धीरे दूसरों लोगों में भी आयेगा। अभी तो ऐसा कि इस स्पर्धा का अंत ही नहीं है। बहुत ज्यादा हद से गुजर चुका है तो इसको हद में लाना आवश्यक है।

प्रश्न - मुझे पता है कि आप इस सवाल का सीधा जवाब नहीं देंगे, फिर भी आप अपने सभी कामों में किसे सबसे अच्छा काम मानते हैं? (**The best work**) इसके लिए आपको हमें एक उपन्यास और एक कहानी बतानी होगी।

उत्तर - आप ठीक कर रही हैं- **the best** कर पाना मुश्किल है। लेकिन उतना मुश्किल नहीं है। जब से मैंने यह अपना अंतिम उपन्यास जो कि ज्यादा पृष्ठों का है। मेरे बाकी सभी उपन्यास को सवा सौ, एक सौ तीस पृष्ठों की ही रही है। मोटा और पतला होने की बात नहीं है। मुझे अपने दूसरे उपन्यासों से भी ऐसा असंतोष नहीं हूँ लेकिन ऐसा लगता था जो कुछ जितना कुछ और जैसे लिखना चाहती थी उतना लिखा, उतना न्याय किया। और भी बहुत लिखना चाहती थी वो सब जो मैं महसूस करती थी। स्त्री के लिए, जीवन के लिए, रिश्तों के लिए या मूल्यों के लिए यह सब मैं अपने इस अंतिम उपन्यास "कौन देश को वासी, वेणु

की डायरी" में दे पाई हूँ। जितना मुझे संतुष्ट बहुत खुशी है। पढ़ने वाले भी यही कह रहे हैं कि मैडम आपने बहुत कुछ जितना इतने वर्षों में दिया, लेकिन अगर नहीं भी दे पा रहे, तो भी आपका सिर्फ ये उपन्यास हमें मिलता तो भी ये उपन्यास ही एक कालजयी कृति है। तो इसलिए मुझे इसका संतोष है। और कहानियां तो बहुत है, उसमें थोड़ी सी कहानियां की नाम ले सकती हूँ। वैसे मेरे लगभग पहली कहानी "गौरा गुणवंती" है। जो की छपी तो पहले "जीजी" लेकिन ये "गौरा" भी उसी समय लिखी जा रही थी। तो सभी लोग कहते हैं कि एक बिल्कुल नई लेखिका की लगभग पहली कहानी और वो इतनी ज्यादा लोगों को मार्मिक लगती हैं। लोगों की मन को स्पर्श करती हैं। ऐसे कुछ थोड़ी सी कहानियाँ जो अपने मन को ज्यादा संतोष दिया है गौरा गुणवंती है। उनका कहना है कि आप की कहानी हमारी संवेदना को साथ लेकर चलती हैं। ऐसे में "रेस" जो लोग कहते हैं कि आप ने समय से बहुत आगे की कहानियाँ लिखी है। जिंदगी जो रेस में तब्दील हो रहा है। आज जो हो रहा है उसे मैंने आज से तीस-पैंतीस वर्ष पहले लिखा है। एक और कहानी बिल्कुल अलग तरह की है, लंबी कहानी "अनाम लम्हों के नाम" उसमें मैंने बहुत करारा व्यंग्य की है। बहुत सी

चीजें को मेरी कहानियां एक लाइन में नहीं चलती है, जो कुछ कहती हैं उसे और भी बहुत कुछ स्पष्ट करके जाते हैं। ऐसी कहानी- "अनाम लम्हों के नाम", "होगी जय, होगी जय…..हे पुरुषोत्तम नवीन" उसमें मैंने एक व्यक्ति ईमानदारी को व्यक्त किया है। ईमानदारी कोई बड़ी बात नहीं है, इमानदारी हमारी स्वभाव में, संस्कारों में और आलकों में होनी चाहिए। ये कोई ईमानदार आदमी कोई ग्लोरीफ्लाइड, महिमामंडित करने की आवश्यकता नहीं है। इसी तरह एक कहानी है, "दादी और रिमोट" लोगों ने उसे इसलिए पसंद किया कि आज तेजी से बढ़ती संवेदनहीनता, मनुष्य के अंदर मानवीय संवेदना को कैसे दृश्य में लिया। जो हम आजकल इतने-इतने लोगों की मरने की खबर सुनते हैं, जो हमारे मन पर कोई असर नहीं पड़ता। जो आज से तीस वर्ष पहले पड़ा करता था। ये चीज बहुत ही दुर्भाग्य की है। इसी तरह कुछ कहानियां और हैं स्त्री को लेकर "आदमकद"- ये बिल्कुल बदसूरत स्त्री की कहानी है। बहुत ही बदसूरत और कुरूप स्त्री और कितनी आदमकद है इसलिए वो कहानी का नाम आदमकद दिया है। हमारे स्त्रियां अपने नकारे पति को भी पाल ले जाती हैं। इस तरह कुछ कहानियाँ हैं, बस वैसे तो सभी रचनाकार अच्छा भी लिखते हैं सामान्य भी लिखते हैं।

प्रश्न - आपने कई सारे साहित्यिक विधाओं पर काम किये है। जैसे:- कविता, कहानी, उपन्यास, व्यंग्य, संस्मरण आदि। इन सब में कौन सी विधा आपको अधिक चुनौतीपूर्ण लगता है?

उत्तर - मुझे कोई भी विधा चुनौती नहीं लगती। क्योंकि जब मैं लिखने बैठती हूँ, तो चुनौती यह होती है कि हम कैसे अपने अंदर का सोच, चाहे कोई भी विधा हो व्यंग्य, उपन्यास या कहानी हम जो लिखना चाहते है, वह लिख पाना हमारी सबसे बड़ी चुनौती है। कितना कह पाए, कितने प्रतिशत कह पाए, शतप्रतिशत तो हम कभी कह नहीं पाते। लेकिन कितना कह पाए ये मेरी सबसे बड़ी चुनौती है और यह हमारे मूड पर है। अगर आप कहें कि अभी आप यह व्यंग्य भेज दीजिए, मैं बिल्कुल नहीं भेज पाऊँगी। लेकिन मैं अपने ऊपर कोई दबाव नहीं डालती। इसीलिए ऊपरी चुनौतियाँ मैं स्वीकार नहीं करती।

प्रश्न - परिवर्तन प्रकृति का नियम है तो इस बदलते परिदृश्य में आप कल के परिवार को कहाँ देखती है या कैसे देखती हैं? उसमें नारी की क्या भूमिका हो सकती है?

उत्तर - मैं अधिकांशतः बल्कि अस्सी प्रतिशत जीवन में आशावादी हूँ। पॉजिटिव थिंकिंगवाली हूँ सकारात्मक विचारों वाली हूँ। हमेशा आशा और उम्मीद रखती हूँ। फिर भी मुझे इन दिनों परिवार की और व्यक्ति की सोच जितनी आत्म केंद्रित और जितनी छोटी होती जा रही हैं। उससे मुझे घबराहट सी होती है बड़ी सयंत होती है। क्योंकि भावी परिवार की क्या स्वरूप होगा उसे सोच कर मैं एक बिंदु पर बहुत ज्यादा उद्विग्न और चिंतित होती हूँ। लेकिन फिर भी मैं अपनी को शायद ढाढ़स बांधती हूँ, कि नहीं धीरे-धीरे स्त्री और पुरुष में भी, मैंने उन दिन उस दिन आपके एक प्रश्न के बारे में सोचा था ,-कि आपने पूछा कि आदर्श परिवार के लिए आप क्या चाहती हैं? उसमें खाली स्त्री ही नहीं पुरुष भी ये सोचे कि पारिवारिक सुख-शांति की पहली शर्त पैसा नहीं होता। पहली शर्त यह है कि पति-पत्नी एक दूसरे की विचारों और भावनाओं का सम्मान करें। बस इतना हो जाय, भावनाओं का सम्मान करें तो वो परिवार में समरसता भी होगी संतुलन भी होगी। बच्चे आम रूप से जैसे हम होते हैं वैसे पाते हैं। पीर प्रेशर से बचाना बच्चों को जरूरी है। लेकिन मैं जानती हूँ, हाँ एक माँ के लिए आज बड़ी चुनौती है। युवा अभिभावकों के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। तो भावी परिवार के लिए हमें पूरा सामाजिक ढांचा और सबसे बढ़कर शिक्षा प्रणाली में, शिक्षा पाठन,शिक्षा के ढंग उस में बहुत परिवर्तन लाए बिना, हम एक बेहतर समाज का निर्माण नहीं कर सकते हैं।

प्रश्न - वर्तमान युग की महिलाओं को आप क्या संदेश देना चाहती हैं जो अपने काम में भी सफल रहना चाहती हैं और परिवार में भी केंद्रीय परमाणु अंग रहना चाहती है?

उत्तर - मैं ज्ञान से ज्यादा महत्व विवेक को देती हूँ,हर व्यक्ति के विवेक को देती हूँ। और मैं यह मानती हूं कि स्त्री में स्वभावतः विवेक, समझ ज्यादा होती है। तो आजकल स्त्री बहुत डगमगा गई है, असंतुलित हो गई है, और सिर्फ अपनी महत्वाकांक्षा को देख रही हैं। यह जो मैंने पहले भी कहा अगर

आप महत्वकांक्षी हैं कुछ पाना चाहती हैं तो आप सिंगल रहिए। लेकिन यदि आप दोनों पाना चाहते हैं तो आप यह समझ लीजिए कि सब कुछ किसी को नहीं मिला करता है। पहले हमें समझना चाहिए कि सब कुछ मिला नहीं करता, हमें कहीं न कहीं एक संतुलन लाना चाहिए। मैंने बहुत ही कामकाजी महिलाओं की बच्चों को देखा है कि वो घरेलू माँ से कहीं ज्यादा अनुशासन में रखती है। ये भी मैंने देखा कि बहुत ही

इसका कारण ये है कि उन्होंने अपने बच्चों को सही संस्कार और क्वालिटी टाइम जो मैंने पहले कहा वो दिया है। सबसे पहले क्वालिटी टाइम उनको देना और समय रहते उनके रुचियों की खबरदारी, निगरानी रखना। जैसे आपको कैसे कपड़े पहनने चाहिए। ऐसे लड़कियां के लिए आजकल जो है कि मेरा शरीर है, मेरे पैसे हैं, मैं जो चाहे वह पहनूँ। वह कौन होते हैं बोलनेवाले। यह बहुत ही गलत बात है,हम समाज में रहते हैं। तो एक आपको मर्यादित कपड़े पहनने चाहिए। इसको मैं मानती हूँ कि आप अपने घर में अकेले में जो चाहे पहने। और पहले तो मैं यही समझती हूँ कि एक मैच्योर माँ, एक परिपक्व माँ, वो हमेशा सिर्फ अपने करियर नहीं देखती। उसने विवाह किया तो पति और बच्चों का खैरियत रखती है पति भी देखेगा की पत्नी और बच्चे का भी ध्यान रखें। ये संतुलन बहुत मुश्किल है आज के समय में लेकिन यही समाधान है।